The Brāhmī, International Multidisciplinary Research Journal
(Peer Reviewed, Referred & Open Access Journal)
Volume: 01 | Issue: 04 | Dec-Feb 2025 | ISSN: 3048-9660 (Online) | www.thebrahmi.com

संस्कृत साहित्य को जैनाचार्य पद्मसुन्दरसूरि का अवदान

रोहित सुन्द्रियाल
शोध छात्र ,संस्कृत एवं वैदिक अध्ययन विभाग,
बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय (केन्द्रीयविश्वविद्यालय), लखनऊ

शोधसार

ज्ञानधरोहर के पोषक के रूप में संस्कृत साहित्य में अनेक आचार्यों, मुनियों एवं मतावलम्बियों का सदा से ही विशिष्ट अवदान रहा है। इसी क्रम में जैनाचार्यों की भी सुदीर्घ एवम् अत्यन्त समृद्ध परम्परा का उल्लेख प्राप्त होता है । यह धारा द्वितीय शताब्दी से अद्यावधि तक चली आ रही है। इस विद्वत् परम्परा में 16 वीं शताब्दी में श्वेताम्बर जैनाचार्य एवं सम्राट अकबर के आध्यात्मिक मित्र पद्मसुन्दरसूरि हुए हैं । यह तपागच्छ की नागौरी (नागपुरीय) शाखा के यति थे । इन्होंने संस्कृत तथा प्राकृत में अनेक ग्रन्थों की रचना की, वर्तमान में 21 कृतियों का उल्लेख प्राप्त होता है, परन्तु कुछ ही कृतियाँ सम्पादित रूप में उपलब्ध हैं । जो इस प्रकार हैं श्रीपार्श्वनाथचरितमहाकाव्य, अकबरसाहीश्रृङ्गारदर्पण, यदुसुन्दरमहाकाव्य, ज्ञानचन्द्रोदयनाटक, कुशलोपदेश एवं प्रमाणसुन्दर । आचार्य पद्मसुन्दरसूरि के ग्रन्थ दार्शनिक एवम् ऐतिहासिक दृष्ट से महत्वपूर्ण हैं । प्रस्तुत शोधपत्र के माध्यम से साहित्य को पद्मसुन्दरसूरि के अवदान एवम् उनके व्यक्तित्व तथा कर्तृत्व पर प्रकाश डाला जायेगा ।

मुख्य शब्द

संस्कृत साहित्य, परम्परा, पद्मसुन्दरसूरि, जैनाचार्य, तपागच्छ, श्रीपार्श्वनाथचरितमहाकाव्य, अकबरसाहीश्रृङ्गारदर्पण, यदुसुन्दरमहाकाव्य, ज्ञानचन्द्रोदयनाटक, कुशलोपदेश, प्रमाणसुन्दर, ग्रन्थ ।

प्रस्तावना

साहित्य के विषय में कथन है कि “हितेन सह तस्य भावः साहित्यम्” अर्थात् जो रचना अपने भीतर प्राणी मात्र के हित साधन का भाव लिए हो वही साहित्य है । इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए कवि एवम् आचार्यों ने अपना कर्म किया । इस कर्मान्तर्गत साहित्य एवं काव्य लेखन की समृद्ध एवं विकासोन्मुखी यात्रा रही है । श्रुति - स्मृतियों से प्रारम्भ होकर आज यह व्यापकता से विकसित एवं ज्ञान के हर क्षेत्र में फैली हुई है । इस परम्परा को पुष्पित एवं पल्लवित करने में अनेक आचार्यों, मतावल्बियों ने अपना सर्वस्व दिया, तथा आचार, नीति, ज्ञान, वैराग्य, दर्शन, पुराणेतिहास, लौकिक एवम् अलौकिक ज्ञान धाराओं का प्रतिपादन किया । इसी श्रृंखला में जैन मुनियों, यतियों का अपना विशिष्ट स्थान है । जैन परमाचार्य स्वामी समन्तभद्र (द्वितीय शती) से यह सुसमृद्ध परम्परा प्रारम्भ होती है । उन्होंने ही भक्तिरस से स्निग्ध श्लाघनीय स्तोत्रों की रचना कर संस्कृत काव्यों के प्रणयन का प्रारम्भ किया । फिर यह परम्परा उत्तरोत्तर गतिमान रही एवम् आज भी निर्बाध गति से चलायमान है । इसी विद्वत्त परम्परा में 16वीं शताब्दी मे श्वेताम्बर जैनाचार्य एवं सम्राट अकबर के आध्यात्मिक मित्र आचार्य पद्मसुन्दरसूरी हुए । इन्होंने प्राकृत तथा संस्कृत में अपना लेखन कार्य किया । इनकी प्रकाशित अप्रकाशित विभिन्न कृतियाँ प्राप्त होती हैं ।

जैनधर्म की श्रमण परम्परा का जो परिष्कृत रूप अद्यावधि दृष्टिगोचर होता है उसकी पृष्ठभूमि में श्रमणों की कठोर तपस्या और आचार विद्यमान है। जब भी श्रमण शिथिलाचार में प्रवृत्त हुए तो उसके शोधन हेतु आचार्यों ने विभिन्न निर्णय लिए जिसके फलस्वरूप नवीन गच्छों की स्थापना हुई। इसी परम्परा में बृहद्गच्छीय आचार्य जगच्चन्द्रसूरि ने जब अपने गच्छ में व्याप्त शिथिलाचार को देखा तो उग्र तपश्चर्या में संलग्न हो गए, जिससे प्रभावित

The Brāhmī, International Multidisciplinary Research Journal
(Peer Reviewed, Referred & Open Access Journal)
Volume: 01 | Issue: 04 | Dec-Feb 2025 | ISSN: 3048-9660 (Online) | www.thebrahmi.com

होकर आघाटपुर के शासक जैत्रसिंह ने वि.सं. 1285 में उन्हें 'तपा' विरुद् प्रदान किया। कालान्तर में जगच्चन्द्रसूरि की शिष्य सम्पदा उक्त आधार पर तपागच्छीय कहलायी ।[1]

तपागच्छीय आचार्यों ने संस्कृत, प्राकृत, आदि भाषाओं के माध्यम से अनेक शास्त्रों, टीकाओं, टिप्पणों, दार्शनिक ग्रन्थों की रचना कर अपने ज्ञान के आलोक का विस्तार किया । इसी सुदीर्घ ज्ञान परम्परा में तपागच्छीय आचार्य आनन्दमेरु के प्रशिष्य एवं पद्ममेरू के शिष्य आचार्य पद्मसुन्दरसूरि हुए ।[2] सुन्दरप्रकाशशब्दार्णवपुष्पिका में लिखा गया है, यथा-

इति श्रीमन्नागपुरीयतपागच्छनभोमणिपण्डितोत्तमश्रीपद्ममेरुशिष्यपण्डितपद्मसुन्दरसूरि···।[3]

इनके जन्मक्षेत्र एवं कर्मक्षेत्र के विषय में अनेक उद्धरण प्राप्त होते हैं । इनका जन्म राजस्थानगत तेजपुर गाँव में हुआ था । जो गाँव जोधपुर नरेश मालदेव के हस्तक था ।[4] परन्तु नाथूराम प्रेमी अपने इतिहास ग्रन्थ में कवि की कर्मभूमि तेजपुर, जोधपुर, चरथावल, एवं दिल्ली बताते हैं ।[5] आचार्य पद्मसुन्दरसूरि नागपुरीय तपागच्छ के श्वेताम्बर संप्रदाय के यति थे । इनके विषय में कथन है कि यह मुगलसम्राट अकबर के आश्रित और सम्मानित कवि थे । अकबर की विद्वत्परिषद् में 32 हिन्दू सभ्यों में कवि पद्मसुन्दर का अग्रस्थान था । इसी बात को एच० ब्लौचमैन (H. Blochmann) ने अपने अनुवादित (Aini Akbari) में अकबर के 180 स्कोलर के नाम दिये हैं, जिसमें पद्मसुन्दरसूरि का भी नामोल्लेख है ।[6] इतिहासकारों ने इन्हें अकबर का आध्यात्मिक मित्र कहा है । श्रीहर्षकीर्तिकृतधातुतरङ्गिणी में कहा गया है कि पद्मसुन्दर ने चन्द्रकीर्ति नामक गर्वित ब्राह्मण को अकबर के दरबार में अपनी विद्वत्ता से परास्त किया था । जिसके कारण अकबर ने प्रसन्न होकर गाँव, कंबल, पालकी इत्यादि से सम्मानित किया ।

साहेः संसहि पद्मसुन्दरगणिर्जित्वा महापण्डितं
क्षौमग्रामसुखासनाद्यकबरश्रीसाहितो लब्धवान् ।
हिन्दूकाधिपमालदेवनृपतेर्मान्यो वदान्योऽधिकं
श्रीमद्योधपुरे सुरेप्सितवचाः पद्माह्वयः पाठकः ॥[7]

आचार्य पद्मसुन्दरसूरि बहुमुखी प्रतिभा के धनी कवि थे । वह जैनशास्त्रों के साथ-साथ जैनेतर शास्त्रों के भी प्रकाण्ड विद्वान थे । इन्होंने विभिन्न विषयों को लेकर काव्य एवं शास्त्रग्रन्थों की रचना की है । इनकी विद्वत्ता का प्रमाण अकबर के दरबार में मिले सम्मान से ज्ञात किया जा सकता है । मुगल सम्राट अकबर को संस्कृत साहित्य का प्रेमी कहा जाता है । इसके मूल में जैनाचार्यों की विद्वत्ता रही है । पद्मसुन्दरसूरि अपने गुरु परम्परा का अनुसरण करते हुए मुगल दरबार में अपनी विद्वत्ता से ख्यातिलब्ध थे । इनसे पूर्व इनके गुरु पद्मेरु एवम् उनके गुरु आनन्दमेरू भी मुगल दरबार के प्रसिद्ध रत्न थे ।

जम्बूअज्झयण (प्राकृत) की पुष्पिका में कर्ता का नाम उपाध्याय श्रीपद्मसुन्दरगणि लिखा प्राप्त होता है । मन की संयमशीलता, वाणी की पटुता और आचरण की श्रेष्ठता इन गुणों से आचार्य सुसज्जित थे, परिणामस्वरूप इन्हें गणि पद से अलङ्कृत किया गया । गणि से तात्पर्य गण का अधिपति। जैनशास्त्रों के अनुसार गणि पद की प्राप्ति के लिए निम्न गुणों का होना आवश्यक है - ' श्रद्धवान्, सत्यवादी, मेधावी, बहुश्रुतता, शक्तिमत्ता और अल्पाधिकरणता ।[8] इन छह गुणों से युक्त साधु गण को धरण कर सकता है अर्थात् साधु समुदाय को मर्यादा में रख सकता है । इसी प्रकार इनके लिए अन्य उपाधिवाचक शब्द भट्टारक, उपाध्याय, वादी, सूरि, आचार्य, मुनि, पांडे, पंडित आदि प्राप्त होते हैं ।[9]

आचार्य वाचस्पति गैरोला ने अपने इतिहास ग्रन्थ में इन्हें रायमल्ल, जोधपुरनरेश मालदेव एवम् अकबर के

The Brāhmī, International Multidisciplinary Research Journal
(Peer Reviewed, Referred & Open Access Journal)
Volume: 01 | Issue: 04 | Dec-Feb 2025 | ISSN: 3048-9660 (Online) | www.thebrahmi.com

आश्रित माना है ।[10] इन राजाओं के समकालीनता के आधार पर इन का समय ईसवी सन की 16 वीं शती रहा है । मोहनलाल दलीचन्द देसाई लिखते हैं "हीरविजयसूरि की अकबर से भेंट सन 1583 में हुई थी । तब अकबर ने हीरविजयसूरि से कहा कि पद्मसुन्दरसूरि मेरे आश्रित थे और उन्होंने अपना ग्रन्थसंग्रह मुझे समर्पित किया" ।[11]

भारतीय विद्याओं का प्रयोजन प्रवृत्ति से निवृत्ति और निवृत्ति से निर्वृत्ति की ओर जीवन को उन्मुख करना है । इसका प्रभाव ऋषियों एवं विद्वानों के जीवन पर स्पष्ट दिखाई देता है । वें सभी अपने कार्यों का निर्वहन करते हुए भी त्याग की भावना से पूर्णरूपेण भावित रहते थे। इस कारण से उनके मानस पटल पर कभी अपने वंशादि का परिचय देना का विचार अङ्कित नहीं हुआ इसलिए आज उनका जीवनवृत्त तमसाच्छन्न है। कोई भी कवि एवं आचार्य अपने से पूर्व अथवा अपने समकालीन व्यक्ति विशेष, और सामाजिक, राजनैतिक धार्मिक, और साहित्यिक परिस्थिति से निश्चित रूप से प्रभावित होता है। जिसका उल्लेख ग्रन्थ में अनायास ही हो जाता है। ये सभी तत्त्व लेखक के व्यक्तित्व एवं काल निर्धारण में विशेष सहायक होते हैं ।

आचार्य पद्मसुन्दरसूरि का कर्तृत्व

आचार्य पद्मसुन्दरसूरि काव्य परम्परा के विदग्ध विद्वान् थे । वह अनेक शास्त्रों के सिद्धहस्त विद्वान् होने के साथ-साथ कारयित्री प्रतिभा के भी धनी थे । उन्होंने संस्कृत, प्राकृत में कई ग्रन्थों की रचना की है । उनकी साहित्यिक यात्रा अलङ्कारशास्त्र, ज्योतिष, व्याकरण, न्याय, नीति, स्तोत्र, चरित्र, महाकाव्य, कोषादि अनेक विषयों में है ।

अद्यावधि आचार्य पद्मसुन्दरसूरि की सभी कृतियाँ प्रकाशित नही हैं । उनकी कतिपय कृतियाँ ही प्रकाशित हैं एवम् अनेक कृतियाँ अप्रकाशित पाण्डुलिपि के रूप में हैं । प्रकाशित कृतियों का विवरण निम्नवत् है -

यदुसुन्दर महाकाव्य

यदुसुन्दरमहाकाव्य 12 सर्गात्मक एक उत्तम महाकाव्य है । इसका कथानक मथुरापुरी के राजा वसुदेव एवं पीठालय नगरी के राजा हरिश्चन्द्र की पुत्री कनकावती के प्रणय पर आधारित है । इस महाकाव्य का प्रारम्भ मथुरापुरी के वैभव से होता है आचार्य लिखते है वह मथुरा नगरी अपनी सम्पदा से, वैभव से, पराक्रम से स्वर्ग तक प्रकाशमान है ।

इहैव वर्षे यदुवंशपुङ्गवः पवित्रिता विश्वजनीनविक्रमै ।
लघूकृता द्यौरनया दिविस्थिता स्वसम्पदोरूर्मथुरापुरी भुवि ॥[12]

इसी प्रकार कवि अपनी वर्णनाशैली से वसुदेव के वैशिष्ट्य को प्रतिपादित करते हुए कहते है कि समुद्र नाम का अत्यन्त प्रतापी यदुवंशी राजा हुआ उसका सबसे छोटा अनुज अत्यन्त सुन्दर, शौभाग्यशाली, कलावान वसुदेव हुए।

ततः कनीयाननुजो मनस्विनां
महत्तरो यो वसुधासुधाधिपः ।
सुभाग्यसौभाग्यकलाकलानिधि
र्निधिर्वसूनां वसुदेव इत्यभूत् ॥[13]

यह महाकाव्य संस्कृत काव्यशास्त्र में दी गई महाकाव्य के लक्षण की परिधि में पूर्णतः घटित होता है । इस कृति का सम्पादन डी. पी. रावल द्वारा १९८७ में लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामंदिर अहमदाबाद से हुआ है ।

श्रीपार्श्वनाथचरितमहाकाव्य

The Brāhmī, International Multidisciplinary Research Journal
(Peer Reviewed, Referred & Open Access Journal)
Volume: 01 | Issue: 04 | Dec-Feb 2025 | ISSN: 3048-9660 (Online) | www.thebrahmi.com

यह महाकाव्य सात सर्गों में निबद्ध है । इस महाकाव्य का कथानक जैन सम्प्रदाय के तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ पर आधारित है । इस महाकाव्य में पार्श्वनाथ के नव भव (जन्म) का ऐतिहासिक कथानक प्राप्त होता है । पार्श्वनाथ अपने नवें जन्म में जैन सम्प्रदाय के तेइसवें तीर्थंकर के रूप में ख्यातिलब्ध होते हैं। यह जन्म इनका वाराणसी नगरी के इक्ष्वाकुवंशीय राजा अश्वसेन एवं रानी वामा के घर होता है उनके जन्म के यशोगान में आचार्य लिखते है कि देवी वामा के गर्भ से प्रकाश उदयमान हुआ । जो तीन ज्ञानों को धारित किया हुआ बालक सूर्य समान प्रकाशमान था ।

ज्ञानत्रयधरो बालो बालार्क इव दिद्युते ।
स वामायाः इव प्राच्याः कुक्षौ सोद्योतमुद्गतः ॥[14]

यह महाकाव्य ऐतिहासिक एवं दार्शनिक दोनो दृष्टियों से अत्यन्त महत्वपूर्ण काव्य है। इस महाकाव्य के तृतीय में वाराणसी नगरी की तुलना देवताओं की नगरी अमरावती से की गयी है , तथा इस नगरी में संस्कृत बोलने वाले मानव देवताओं की तरह शोभा पाते हैं ।

तत्र वाराणसीत्यासीत् नगरीवाऽमरावती ।
यत्र संस्कृतवक्तारः सुरा इव नरा बभुः ॥[15]

इस कृति की सम्पादिका क्षमा मुन्शी द्वारा १९८६ में लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामंदिर अहमदाबाद से प्रकाशन किया गया ।

अकबरसाहीश्रृङ्गारदर्पण

यह कृति अत्यन्त विशिष्ट रचना है इस रचना को कवि ने अकबर को समर्पित कर के लिखा है वैसे तो यह काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ है परन्तु इसके प्रथम उल्लास में अकबर के वंश का वर्णन एवं प्रशस्ति ऐतिहासिकता लिए हुए हैं । प्रथम उल्लास में ही तत्कालीन राजाओं में बाबर, हुमायूँ और अकबर का वर्णन प्राप्त होता है । पद्मसुन्दरसूरि बाबर का वर्णन करते हुए कहते हैं कि -

आसीदुग्रसमग्रवंशविदिता या स्वर्धुनीवामला
नानाभूपतिरत्नभूरिव परा जातिश्चगता भिधा ।
तस्यां बाबरपादिसाहिरभवन्निर्जित्य शत्रून् वल -
दिल्लीमण्डलमण्डनं सकल भूपालैनिषेव्यक्रमः ॥[16]

प्रस्तुत श्लोक से बाबर के दिल्ली के शासक रूप में पुष्टि होती है । इसी क्रम में आगे हुमायूँ, अकबर तथा वंशावली व प्रशस्ति की गयी है । इस ग्रन्थ में चार उल्लास प्राप्त होते हैं । इस कृति का सम्पादन के. माधवकृष्ण शर्मा द्वारा १९४३ में अनूप संस्कृत लाइब्रेरी बीकानेर से किया गया ।

ज्ञानचन्द्रोदयनाटक

यह एक प्रतीक नाटक है इसमें आचार्य पद्मसुन्दरसूरि ने जैन दर्शन एवं जैनेतर दर्शन के के तत्त्वों का प्रतिपादन किया है। इसके मङ्गलाचरण में नमस्कार करते है सत् असत् एवम् अव्यक्त विश्वरूप मूर्ति को जो आत्म चेतना का प्रकाशक तथा आनन्द से युक्त है ।

नमः सदसदव्यक्तविश्वरूपैकमूर्तये ।
स्वसंवित्तिप्रकाशाय सहजानन्दशालिने ॥[17]

यह नाटक पाँच अङ्को में विभक्त है । इस कृति का सम्पादन कार्य श्री नगीनभाई शाह द्वारा १९८१ में लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामंदिर अहमदाबाद से किया गया ।

कुशलोपदेश

The Brāhmī, International Multidisciplinary Research Journal
(Peer Reviewed, Referred & Open Access Journal)
Volume: 01 | Issue: 04 | Dec-Feb 2025 | ISSN: 3048-9660 (Online) | www.thebrahmi.com

यह 'कुशलोपदेश' नामक कृति डॉ० श्री नगीनभाई शाह द्वारा सन् १९७४ में, ला० द० विद्यामंदिर, अहमदाबाद से प्रकाशित "संबोधि" नामक त्रिमासिक पत्रिका में भाग ३, नं० २-३ में प्रकाशित की गई थी ।[18]

प्रमाणसुन्दर

'प्रमाणसुन्दर' नामक प्रमाणविद्या पर लिखा हुआ प्रकरण ला० द० विद्यामंदिर, अहमदाबाद से प्रकाशित 'जैन दार्शनिक प्रकरण संग्रह' (Jaina Philosophical Tracts) नामक ग्रन्थ में डा० श्री नगीनभाई शाह द्वारा पृ० १२७-१६० पर सम्पादित किया गया था ।[19]

अप्रकाशित ग्रन्थ

आचार्य पद्मसुन्दरसूरि के अनेक मातृकाग्रन्थ अप्रकाशित रूप में देश के विभिन्न ग्रन्थालयों में उपलब्ध ' जिन पर शोधकार्य की आवश्यकता है । इन अप्रकाशित कृतियों का उल्लेख श्री नगीनभाई शाह द्वारा श्रीपार्श्वनाथचरितमहाकाव्य की भूमिका में किया गया है। जो निम्नवत् हैं- परमतव्यवच्छेदस्याद्वादसुन्दरद्वात्रिंशिका, राजप्रश्नीयनाट्यपदभञ्जिका, षड्भाषागर्भितनेमिस्तव, वरमङ्गलिकास्तोत्र, भारतीस्तोत्र, सारस्वतरूपमाला, हायनसुन्दर, सुन्दरप्रकाशशब्दार्णव, रायमल्लाभ्युदयमहाकाव्य, जम्बूचरित्र, प्रज्ञापनासूत्र की अवचूरि ।

निष्कर्ष

संस्कृत साहित्य के संवर्धन में जैनाचार्यों का सदा से ही विशिष्ट अवदान रहा है । इस परम्परा में जैनाचार्यों ने अत्यन्त विपुल तथा उच्च कोटि के साहित्य का सृजन किया । आचार्य पद्मसुन्दरसूरि का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व भी संस्कृत साहित्य में इसी प्रकार की व्यापकता लिए हुए है । साहित्य ही एकमात्र साधन है जिसके माध्यम से दर्शन, धर्मशास्त्रादि के दुर्बोध एवं कष्ट साध्य तत्त्वों को सरलता से गृहीत किया जा सकता है । इसीलिए आचार्य ने संस्कृत साहित्य के द्वारा जैन दर्शन एवं जैनेतर दर्शन के दुष्कर तत्त्वों का प्रतिपादन किया । इन्होंने अपनी रचनाओं के द्वारा तत्कालीन सामाजिक एवम् ऐतिहासिक तथ्यों को उल्लेखित किया । इस शोधपत्र के निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि पद्मसुन्दरसूरि का संस्कृत साहित्य को अवदान अत्यन्त महत्वपूर्ण है । उन्होंने अपने लेखन में साहित्यिक कौशल, धार्मिक भावना, दार्शनिक दृष्टिकोण तथा ऐतिहासिक तथ्यों का अद्भुत मिश्रण किया । जिस कारण अद्यावधि तक वह प्रासंगिक एवं पठनीय हैं ।

सन्दर्भ

1. तपागच्छ का इतिहास (भाग 1 खण्ड 1) प्रकाशकीय पृ.1
2. पट्टावली समुच्चय, भाग 2, चारित्रस्मारक ग्रन्थमाला क्र. 44, अहमदाबाद, 1950, पृ. 224
3. सुन्दरप्रकाशशब्दार्णवपुष्पिका
4. अनेकान्त, वर्ष 7, किरण 5- 6, पृ. 49-52
5. जैन साहित्य का इतिहास, नाथूराम प्रेमी, पृ. 395- 403
6. आइने-अकबरी, एच० ब्लौचमैन द्वारा अनुवादित, दिल्ली, द्वितीय आवृत्ति 1965, पृ. 537 से 547 तक ।
7. हर्षकीर्तिसूरि की धातुतरंगिणी, ला० द० विद्यामंदिर, अहमदाबाद, प्रति क्रमांक 1882, पत्र 76
8. छहिं ठाणेहिं सपण्णे अणगारे अरिहति गण धारित्तए, तजहा - सड्ढी पुरिसजाते, सच्चे पुरिसजाते, मेहावी

पुरिसजाते, बहुस्सुते पुरिसजाते, सत्तिम, अप्पाधिकरणे, स्थानाङ्गसूत्र, 6.1 पृ. सं. 532

9. अनेकान्त, वर्ष 7, किरण 5- 6, पृ. 49-52
10. संस्कृति साहित्य का इतिहास, वाचस्पति गैरोला, पृ. 363 - 364
11. जैन गुर्जर कविओ, मोहनलाल दलीचन्द देसाई, पृ. 761
12. यदुसुन्दरमहाकाव्य 1.2
13. यदुसुन्दरमहाकाव्य 1.25
14. श्रीपार्श्वनाथचरितमहाकाव्य 3.69
15. श्रीपार्श्वनाथचरितमहाकाव्य 3.5
16. अकबरसाहीश्रृङ्गारदर्पण 1.2
17. ज्ञानचन्द्रोदयनाटक 1.1
18. श्रीपार्श्वनाथचरितमहाकाव्य भूमिका पृ. 7
19. श्रीपार्श्वनाथचरितमहाकाव्य भूमिका पृ. 7

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अनेक संपादक, जैन साहित्य का बृहद इतिहास (7 खंड) – पार्श्वनाथ विद्यापीठ ,वाराणसी 1998
2. गैरोला वाचस्पति, संस्कृत साहित्य का इतिहास, चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी-
3. ज्योतिषाचार्य, नेमिचन्द्र. तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परंपरा (4 खंड)
4. नाहटा,अगरचन्द्र.कासलीवाल, कस्तूरचन्द्र . सेठिया, मूलचंद, भानावत ,नरेंद्र. राजस्थान का जैन साहित्य . जयपुर .प्राकृत भारती ,1977
5. पद्मसुन्दर, कृष्णशर्मा, माधव(सम्पादक), अकबरसाहिश्रृङ्गारदर्पण , अनुप संस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर,1943
6. पद्मसुन्दर, जे० शाह,नगीन, ज्ञानचंद्रोदयनाटक, लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्या मन्दिर , अहमदाबाद, 1981
7. पद्मसुन्दर, मुन्शी,क्षमा(संपादिका), पार्श्वनाथचरितमहाकाव्य, लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्या मन्दिर , अहमदाबाद, 1986 .
8. पद्मसुन्दर, रावल, डी० पी०(संपादक),यदुसुन्दर महाकाव्य , लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्या मन्दिर , अहमदाबाद, 1987 .
9. प्रसाद, शिव तपागच्छ का इतिहास (भाग1 खण्ड1) पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी, 2000
10. प्रेमी, नाथूराम.जैन साहित्य और इतिहास . हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर प्राइवेट लिमिटेड, बंबई .1956.
11. सत्यव्रत. जैन संस्कृत महाकाव्य . नागौर (राज०) जैन विश्व भारती प्रकाशन. 1989